STD
ISD
PCO
FAX

मुंबई से एक सीख

राहुल मेहरोत्रा

भारत और खास तौर पर नगरीय भारत वास्तुशिल्पीय बहुलतावाद के एक अनूठे, चकरा देनेवाले परिदृश्य के रूप में उभर रहा है। नगरीय भारतीय परिदृश्य की विशेषता है कि उसमें तीव्र, गहरा दित्व है - जहां पर आधुनिकता, परंपरा, संपन्नता, सामुदायिकता और सांप्रदायिकता, मध्ययुगीन समाज और प्रखर धारदार अत्याधुनिक सूचना - प्रौद्योगिकी एक दूसरे से सम्मिलित हो एक अबोधगम्य शहर का निर्माण होता है। ये संकुल, शहर की पारंपरिक अवधारणाओं को बेमानी करते हैं और शहर को ज्यादातर 'स्थिर' और 'स्थायी' अस्तित्व मानने की पारंपरिक अवधारणाओं के बजाय शहरी 'गति' और 'स्पेस -स्थान' के परिवर्तन के जरिए उसका ज्यादा सही प्रतिनिधित्व करते हैं।

आज हमारे नगरीय क्षेत्रों में दो शहर होते हैं - स्थिर-गतिहीन और गतिज-गतिशील -यों दो नितांत अलग - अलग दुनियाएं एक ही नगरीय स्थान में साथ-साथ रहती हैं। गतिमान शहर का प्रतिनिधित्व करते हैं उसके शिल्पी ढांचे और विशाल भवन जो पक्की - स्थायी वस्तुओं से निर्मित हुए होते हैं। अंतराली स्थान को घेरेकर स्थित गत्यात्मक शहर गतिपूर्ण शहर होता है- अस्थायी वस्तुओं से निर्मित 'कच्चा' शहर होता है। गतिज शहर में वास्तुशिल्प, भवन, आदि शहर की दर्शनीय वसतुएं नहीं रह जाती उसकी बनिस्बत जुलूस और उत्सव उसके नजारों और स्मृतियों की वस्तुएं हो जाते हैं और शहर की अभिव्यक्ति ही स्वभावत: अल्पकालिक होती है, सतत परिवर्तनीय होती है। इस प्रकार के गत्यात्मन और करीब - करीब खंडित-स्किड्जोफ्रीनिया मानसिकता की स्थिति में नगरीय या वास्तुशिल्पीय संरक्षण के मसलों पर क्या रुप अपनाया जा सकता है? हम गतिहीन और गत्यात्मक की कैसे संगति बिठाएंगे? निर्मित विरासत के संरक्षण के क्या मायने रह जाते हैं जबकि वास्तुशिल्प शहर का दृश्यमान नजारा-दर्शनीय तत्व नहीं रह जाता? व्दिधाग्रस्त मन से हम संरक्षण कैसे करेंगे?

यहीं पर आकर सांस्कृतिक अर्थवत्ता की अवधारण को महत्व प्राप्त होने लगता है-यह वह अवधारणा है, विचार

है जहां संस्कृति, स्थान और संभवत: आकांक्षाएं बड़े दिलचस्प तरीके से एक दूसरे को काटती हैं जिससे संरक्षण के प्रति अपनाये जाते रुख के बारे में अनेक सवाल खुल जाते हैं, जहां पर संरक्षण अभियानों के कार्य या दबाव को आवश्यक तौर पर गतिहीन से परे तो जाना ही होगा साथ ही गतिमाणों शहर को भी सम्मिलित करना होगा।

'सांस्कृतिक अर्थवत्ता' की अवधारणा एक ऐसी सर्वसमावेशी धारणा हैं जो सन 1980 के दौरान (ज्यादा सुनिश्चित रूप से बरि चार्टर के साथ) उठे संरक्षण विवाद में साफ-साफ उभरने लगी थी। बरी चार्टर ने 'सांस्कृतिक अर्थवत्ता' को अतीत, वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए सौंदर्यशास्त्रीय, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक या सामाजिक मूल्यवत्त के रूप में परिभाषित किया है? इस परिभाषा में यह विश्वास अव्यक्त रुप से अंतर्निहित है कि 'गतिहीन' स्थिर ही 'सार्थकता' है। यह वह परिभाषा है जो 'वस्तु' केंद्रित (जीवन से विहीन) है और उसकी जड़े पुराने 'रिनेंसाकालीन' पुरातन वादियों व्दारा प्रसारित विवाद में हैं।

ऐसी अवधारणा की तर्क संगति एक ऐसे बेहद बहुलतावादी समाज में क्या है जहां सांस्कृतिक स्मृति बहुदा एक प्रदर्शित प्रक्रिया होती है? हमारा सांस्कृतिक पाठ उस गत्यात्मक शहर के लिए क्या होगा जो कि अब हमारी नगरीय वास्तविकता का बृहत्तर, महत्तर यथार्थ है? इस गतिशील संदर्भ में, यदि संरक्षण की क्रिया को सांस्कृतिक अर्थवत्ता के पाठ से जानकारीयुक्त होना है तो उसे आवश्यक तौर पर अर्थवत्ता निर्मि ति को वास्तुशिल्पीय और संरक्षणवादी दोनों ही विवादों में सम्मिलित करना होगा।

दुर्भाग्य से, अधिकांश संरक्षण-विवाद, परिवर्तन या बदलाव की यों चर्चा करते हैं मानो कुछ खो दिया गया हो, और वह नयी संभावनाओं के प्रतिकूल होता है क्योंकि लोग (खास तौर पर संरक्षण प्रयास के प्रचारक और समर्थक) सहज ही, किसी प्रकार की नयी स्थिति के बारे में प्रतिक्रिया कर बैठते हैं और उसे अतीत के सिसी जादुई क्षण की तुलना में बदतर मानते है। संरक्षण के व्यावसायिक विशेषज्ञ फिर बड़ी आसानी से उस क्षति की भावना का-एहसास का-वर्णन करने के लिए एक तर्काधार विकसित कर लेंगे। लेकिन हमारे समकालीन नगरीय राज्य में, मसला यह है कि किस प्रकार नये वर्गीकरणो की शनाख्त की जाए और उसके साथ कार्य किया जाये बनिबस्त इसक कि 'पिक्चर पोस्टकार्ड शहर' में रमे रहा जाए जो एक ऐसा शहर होता है जो सिर्फ क्षण भर के लिए अतीत की यादों को फिर से ताजा कर देता है।

असल में संरक्षण के आंदोलनकर्ता अक्सर ऐसी मानसिकता बनाये रखते हैं जिसे इटालो, काल्वीनो ने अपनी महत्वपूर्ण प्रारंभिक पुस्तक 'इनविजिबल सिटिज' में कहा है कि, जहां पर्यटकों को शहर देखने के लिये निमंत्रित किया जाता है और फिर उसी के साथ-साथ उन्हें कुछ ऐसे पुराने पिक्चर पोस्ट कार्ड भी देखने को दिये जाते हैं जिनमें यह दिखाया हुआ होता है कि वह शहर पहले कैसा दिखा करता था अगर वह पर्यटक वहां के आवासियों को मायूस नहीं करना चाहता तो उसे उस पिक्चर पोस्टकार्ड शहर की तारीफ करनी ही पड़ेगी और उसे विद्यमान शहर से ज्यादा पसंद करना पड़ेगा हालांकि उसे सुनिश्चित सीमाओं के भीतर हुए बदलावों के प्रति अपने अफसोस को जाहिर न करने की सतर्कता भी बरतनी पड़ेगी।

तो फिर हम इस 'परिवर्तन' -बदलाव को किस प्रकार संरक्षण अभियान का अंगभूत तत्व मानकर अंगीकार करें खास तौर पर ऐसी स्थिति में जहां उस (अतीत के), परिवेश के निर्माता और वर्तमान अभिभावक, नितांत भिन्न सांस्कृतिक निर्मितियों का प्रतिनिधित्व करते हैं ? समकालीन आकांक्षाएं संरक्षण की प्रक्रिया को किस प्रकार प्रेरित करती हैं जब एक भंगिमा में हम साथ-साथ ही आगे और पीछे देखते हैं? नजरीय संरक्षण की प्रकिया के चालक समकालीन इंजन-यंत्र की किस प्रकार शिनाख्त की जा सकती है ? 'सास्कृतिक अर्थवत्ता' को और इस प्रक्रिया को चालित

करने कए लिए कभी - कभी 'सांस्कृतिक अर्थवत्ता' को आविष्कृत करने की आवश्यकता या तर्कसंगतता को किस प्रकार पढ़ा जा सकता है?

मुंबई के ऐतिहासिक फोर्ट इलाके में नागरिकों के समूहों व्दारा किये गये कतिपय कार्यों ने, संरक्षण की इस प्रक्रिया को चालित करने के लिए समकालीन यंत्रों-इंजनों का इस्तेमाल करने के मसले को और ज्यादा महत्व पूर्ण बात यह कि शहर के अंतराली स्थानो को अनुप्राणित करने और शहर में स्थित अनेक भिन्न-भिन्न विश्वों के बीच दहलीज बनाने के मसलों को भी संबोधित किया है। संक्षेप में यह विशिष्ट समस्याओं और उभरती हुई आकांक्षाओं की प्रतिक्रिया में एक साथ ही नये-नये नगरीय वर्गीकरणों का निर्माण करने और अर्थवत्ता का आविष्कार करने का मसला है।

जहां मुंबई इस बात के लिए सौभाग्यशाली था कि सन 1995 में ऐतिहासिक इमारतों और परिसरों का संरक्षण करने का एक कानून पारित किया गया, वहीं यह भी स्थिति रही कि उसके कार्यान्वयन के प्रथम चरण में पिक्चर पोस्टकार्डी शहर का सिंड्रोम हावी रहा- जिसमें अतीत - मोह और भावुकता भरी मनस्थितियों का जोर था। संरक्षण के स्तरमान को 'विशुद्धतावादी रुख' से अंकित किया गया जिसे प्रक्षिक्षित व्यावसायिकों ने स्थायी बना रखा था और जाहिर है वे लोग बौध्दिक रुप से समकालीन नगर के उभरते हुए वृहत्तर सांस्कृतिक परिवेश से कटे हुए -तटस्थ थे। जहां पर यह 'विशेषज्ञता का एक खास ताक' बनाने की बढ़िया रणनीति थी वहीं उसका नतीजा यह हुआ कि आम नागरिकों की ऐसी धारणा बनी कि संरक्षण एक महंगी और मुख्य रुप से विशिष्ट जनों की प्रक्रिया और निजी सरोकार का विषय है।

लेकिन, जब व्यावसायिकों और गैर सरकारी संगठनो के व्यापक वर्गों ने कानून के निहित आशयों और उलझावों को समझा और उससे उनका सरोकार पड़ा तो ते शहर के परिवर्तित हो रहे स्वभाव को देखने लगे और उससे दो-दो हाथ होने लगे और साथ ही उन्होंने नगरीय संरक्षण और ऐतिहासिक परिसरों के पर्यावरण के स्तर में आयी आम अवनति से जुड़े मसलों को भी देखा और उनसे भी दो-दो हाथ होने लगे। सिर्फ एक-एक इमारत के जीर्णोद्धार में क्या तुक था जबकि उसने इर्द-गिर्द का सब कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो रहा था !

इन कामों की वजह से, पर्यावरण की भौतिक स्थिति में सुधार तो हुआ ही साथ ही वास्तुशिल्पीय संरक्षण के (अक्सर अदूरदर्शी) कार्य से बहस कों सरकार नगरीय संरक्षण अभियानों की ओर मोड़ा गया। यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था क्योंकि इसमें वृहत्तर सांस्कृतिक परिवेश से जुड़ना था और उसे एक विकसमान तत्व माना जाना था। इस बदलाव नेसंरक्षण आंदोलन को नियोजन प्रक्रिया के ज्यादा करीब जाने दिया - आखिरकार बही हमारे हमारे शहर के स्वरुप को निदेर्शित करता है। इसके अलावा इस बदलाव से परिणत हुए संरक्षण प्रयासों ने शहर में अन्य ऐसी प्रक्रियाओं के लिए मिसालें स्थायित कीं और उन्हें प्रेरणा दी कि वे वृहत्तर नियोजन प्रक्रिया में अपनी अर्थवत्ता को संरक्षण विवाद से परे ले जाएं।

मुंबई के ऐतिहासिक फोर्ट इलाके से जुड़े कुछ मामलों को देखना उपयोगी होगा। संरक्षण की ऐसी प्रक्रिया में जुड़नेवाला पहला उपक्षेत्र था- ग्रेड 1, मनोरंजन-स्थल, ऐतिहासिक ओवल ग्राउंड-मैदान, जो सन 1996 तक राज्य सरकार के अधिकार -क्षेत्र में था। चूंकि यह शहर स्तरीय खुला स्थान था (मुख्यतया क्रिकेट के लिए इस्तेमाल होता था इसलिए इस मैदान के रख-रखाव के प्रति स्थानीय निवासियों में आम तौर पर तटस्थ भाव था। नतीजा यह हुआ कि इस खुंले स्थाम की हालत इस हद तक खराब हो चुकी थी कि वह ड्रग सौदों, वेश्यागिरी और अन्य घोर दुरुपयोगों का अड्डा सा बन गया था।

नागरिकों के एक दल 'ओ सी आर ए' (ओवल कूपरेज रेसिडेंट्स एसोसिएशन) ने, जिसमें मुख्यतया इस इलाके की महिला निवासी शामिल थीं, अपने पर यह,जिम्मेदारी ली और ओवल मैदान के समुचित रख-रखाव के लिए महाराष्ट्र सरकार

को याचिका दी राज्य सरकार ने जवाब नहीं दिया, नतीजतन नागरिक दल, याचिका को अदालत में ले गया हाईकोर्ट ने उसके पक्ष में फैसला दिया और सरकार को निर्देश दिया कि या तो वह स्वयं उस स्थान का राव-रखाव करे या उसे नागरिकों के दल को सौंप दे और सन 1996 में अंततः इस दल ने इस स्थान की जिम्मेदारी उठा ली।

उसके बाद इस क्षेत्र के लिए योजनाएं बनाई गईं और कोष जमा किया गया ताकि खुले स्थान की घेराबंदी की जाए, संकेत -पट्ट लगाए जाएं और पैदल चलने का रास्ता बनाया जाए ये सारे काम, हेरिटेज कंज़रवेशन कमेटी व्दारा अनुबंधित मार्गदर्शक सूत्रों के अंतर्गत ही थे। असल में, पादचारि रास्ता एक महत्वपूर्ण तत्व बढा गया जिसकी वजह से इस क्षेत्र के निवासियों को इस काम से जोड़ा जाना संभव हो सका। उनसे यह कह पाना मुमकिन हो गया कि वे इस जगह का इस्तेमाल करे और इसके अच्छे रख-रखाव का देख-भाल करें ताकि वह अच्छा बना रहे। इस स्थान के संरक्षण के लिए वैधानिक और कानूनी व्यवस्था तंत्र का प्रभावी इस्तेमाल करने के साथ-साथ एक पादचारी रास्ते के निमार्ण ने इस से नागरिकों को जोड़ा और इस क्षेत्र के संभावित प्रयोगकर्ताओं का एक नया निर्वाचन-क्षेत्र खुल गया और इस प्रक्रिया से उन्हें संरक्षण प्रक्रिया से संलग्न कर दिया गया जिसकी वजह से इस स्थान की एक नई अर्थवत्ता का आविष्कार हुआ जिसने इस मैदान की ऐतिहासिक (सांस्कृतिक) अर्थवत्ता को सौम्यता से विस्तारित कर दिया।

भागीदारीयुक्त संरक्षण के दृष्टिकोण से एक और महत्वपूर्ण अर्थवतायुक्त क्षेत्र है - दक्षिण मुंबई का काला घोड़ा। हालांकि इस जगह का नाम एक काले रंग के घोड़े पर बैठे अंग्रेज राजा एडवर्ड सप्तम की मूर्ति से पड़ा है और अब यह मूर्ति अस्तित्व में नहीं है लेकिन उस घोड़े की (उसके सवार के बगैर!) स्मृति आज भी बनी हुई युवा वास्तुकारों के एक दल ने अर्बन डिज़ाईन रिसर्च, इंस्टीट्यूट के सहयोग से इस क्षेत्र का एक विस्तृत ब्योरेवार सर्वेक्षण किया। उन्होंने यातायात का स्वरुप, भूमि का इस्तेमाल वगैरह का अध्ययन किया और यह खोज निकाला कि इस उप परिसर में देश की समकालीन आर्ट गैलरियों का सबसे बड़ा जमाव है।

इस अध्ययन के बाद इस क्षेत्र के लिए एक एसोसिएशन संगठन (सार्वजनिक ट्रस्ट) का गठन किया गया, इस इरादे के साथ कि वे संरक्षण के लिए अपने -अपने संस्थानों का सक्रिय सहयोग प्रदान करेंगें। एसोसिएशन ने सरकार को याचिका दी कि वह इस क्षेत्र को कला क्षेत्र के रुप में अधिकृत रुप नियत कर दे और अब हर साल यहां एक कला- उत्सव का आयोजन किया जाता है। (पहला उत्सव फरवरी 1998 में आयोजित किया गया था।) इस क्षेत्र को भौतिक रुप से सुधारने के लिए कोष -संग्रह के लिए और साथ ही उसके मूलभूत मूल्य के संरक्षण की ओर ध्यान आकर्षित करने के लिए यह उत्सव आयोजित किया जाता है। यह प्रक्रिया, धन-संग्रह करने और इस क्षेत्र के सार्वजनिक स्थानों और इमारतों दोनों ही के संरक्षण और जीर्णोद्धार के लिए पहले करने में कामयाब रही हैं।

इस क्षेत्र को एक 'कला क्षेत्र' के रुप में विकसित करना, उसके जीर्णोद्धार की प्रक्रिया को चालित करने का एक तरीका था हालांकि ऐतिहासिक तौर पर काला घोड़ा क्षेत्र कभी भी कला क्षेत्र नहीं माना गया था। फिर भी, अब उसके अंतर्भूत संसाधनों को इस प्रकार उपयोग में लाया जा रहा है कि संरक्षण प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जा सके। शायद यह प्रक्रिया भविष्य में इस नयी अर्थवत्ता को कामयाबी से ग्रहण कर,लेगी और सही अर्थो में यह एक कला क्षेत्र के तौर पर पहचाना जाने लगेगा। साथ ही यह भी मुमकिन है कि यह प्रक्रिया इस बिंदु तक विकसित हो जाए कि एक और परिवर्तित पहचान के रुप को ग्रहण कर ले और खत्म हो जाए। बहर हाल,इस प्रक्रिया ने इस क्षेत्र में एक नयी अर्थवत्ता पैदा की है जिसने न सिर्फ संरक्षण प्रक्रिया को संचलित किया है बल्कि इस सार्वजनिक स्थान को विविध विश्वों व्दारा अपनी -अपनी आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति के लिए इस्तेमाल करने के लिए फिर से स्थापित किया है।

फोर्ट इलाके के ही बेलार्ड एस्टेट क्षेत्र की इमारतों - जगहों को साथ ले आने के प्रयासों के परिणाम स्वरुप एक एसोसिएशन का गठन लिया गया को इस परिसर की भौतिक अवनति के मसलों पर विचार करने की देशा में सक्रिय है। पिछले दशकों क दौरान, हॉकरो और विक्रेताओं ने गलियों, रास्तों पर कढणा कर लिया है जिसने परिणाम स्वरुप फुटपाथ को इस्तेमाल करनेवाले पादचारियों को बड़ी असुविधा होती है। इस बात को पहचानते हुए कि होकर और उनके व्दारा उपलब्ध कराई जाती सेवाएं आवश्यक हैं, एसोसिएशन ने एक योजना बनाई है जिसके तहन इन नामों को, यहां की इमारतों के पिछवाड़े में इस्तेमाल न लिये जाने अहातों में जगह दी जाएगी।

स्थिर-गतिहीन शहर के भीतर के खाली स्थानों और अंतरालों के बीच, गतिज शहर को सहजता से बसाना, एक ऐसा रास्ता है जो ऐसे स्थानों की रचना करता है जहां अनेक विश्व साथ-साथ रहते हैं और वास्तुशिल्प का भ्रम भी बरकरार रहता है। यह समकालीन भारत की एक सबल शक्तिपूर्ण छबि बन सकती है, जहां अगर कामयाबी से इसे किया गया तो एक ही स्थान में दो विश्व सिकुड़कर सहअस्तित्व के साथ रहते हैं और वह सहिष्णुतापूर्ण बहुलतावाद का प्रतीक बनता है और साथ ही इसमें समृध्द मानवीय आयाम भी जुड़ सकते हैं जिसका पश्चिमी देशों के शहरों में कभी-कभी नितांत अभाव होता है।

एक समुदाय के तौर पर हमारे लिए यह एक बेहत्तर अवसर प्रदान करेगा। हम इन दुहरे आयामों को सौम्यता से संतुलित करते हुए अपने कतिपय ऐतिहासिक प्रतिमाओं को- इमारतों और विरासती परिसर को बचाये रखने के अपने निश्चय को भी अंजाम दे पाएंगे।

आकांक्षाओं के एजेंडा

किसी भी वैश्विक नगर में भिन्न-भिन्न निर्वाचन क्षेत्रों, निहित स्वाथों और दृष्टिकोणों के बीच होते सौदे-समझौते ही आखिरकार एक उम्मीदपूर्ण स्वस्थ संतुलन बनाते हैं । बुनियादी तौर पर विश्व भर में होनेवाले संरक्षण के प्रयास,उन्हें चाहे जो प्रच्छन्न भेष पहनाया जाये, इसी लक्ष्य से किये जाते है कि भविष्य की ओर हमारी यात्रा को, संक्रमण को ज्यादा सहज-सूगम बनाया जाए क्योंकि परिवर्तन तो अवश्यंभावी है।

मुंबई के इन मामलोंने (सभी फोर्ट इलाने के हैं) इस तथ्य को अर्थवान रुप से रेखांकित लिया है कि जब तक समुदाय संरक्षण प्रक्रिया में पर्याप्त रुप से शामिल नहीं हो जाता,कानूनी प्रावधान के बावजूद किसी भी हद तक कोई कामयाबी बहीं हासिल की जा सकती। साथ ही, इस प्रक्रिया को संचलित कारने के इंगन-यंत्र के तारे पर इस्तेमाल करने के लिए एक समकालीन मकसद को ढूढ़ निकालना, सार्थक रुप हो कामयाब हुआ है। इससे न सिर्फ संरक्षण की प्रक्रिया सुगम बनती है बल्कि इन क्षेत्रों की समकालीन सत्राइयों और मसलों को संबोधित किया जा सकता हैं। क्षेत्र को (फोर्ट परिसर) छोटी छोटी इकाइयों में विभाजित करने से व्यावसायिकों और प्रतिबध्द नागरिकों को सुधार के लिए, प्रचार करने के लिए निर्वाचन क्षेत्रों का गठन करने में सुविधा हुई। हर इकाई से सुविधाजनक आधार की वजह से सामान्य आकांक्षाओं अभिव्यक्ति देने के अवसर बढ़े।

इस प्रक्रिया ने एक बुनियादी मसले को भी सामने रखा। वह यह कि उत्तर-उपनिवेशवादी हालात में संरक्षण के मसले और नगरीय संरक्षण आंदोलन, निरपवाद रुप से पर्यावरणीय आंदोलनों से जन्म लेते हैं न कि ऐतिहासिक प्रतिमाओं को बरकरार रखने की सांस्कृतिक आकांक्षा से। असल में, नागरिकों की समूची पीढ़ी के लिए, मुंबई शहर विक्टोरियाई केंद्र, दमन और अलगाव का प्रतीक बनता है - निश्चित ही ये इमारतें हमारे औपनिवेशक अतीत के स्मृति चिन्ह हैं। अन्य लोगों के लिए ये ऐतिहासिक केंद्र ऐसे खंड हैं जहां नगरीय रुप का सामंजस्य और वास्तुशिल्प और नगरीय डिज़ाइन का एकीकरण एक नितांत सुखद (या कम से कम संभावित रुप

से सुंदर) पर्यावरण की निर्मित करना है जो कि मनमाने विकास के समकालीन भारतीय नगरीय परिदृश्य की तुलना में अत्यंत विलोमपूर्ण स्थिति है।

इसलिए इस संदर्भ में, संरक्षण के प्रयासों को, अपनी-अपनी वस्तु को विशुध्द रुप से इमारत और पर्यावरण के संसाधन के तौर पर लेना पड़ेगा और वे अपनी प्रतिमागत या प्रतीकात्मक निहितार्थों से वियुक्त होंगे। इस समय, शहर में, एक ही स्थान पर उसे भिन्न -भिन्न तरीके से इस्तेमाल करते हुए अनेक विश्व विराजमान हैं और संरक्षण की इस प्रक्रिया को सुगम बनाने के लिए यह जरुरी है कि संरक्षण रणनीति के तहत, संरक्षण प्रक्रियाएं इमारतों के पुनरुपयोग के साथ-साथ नगरीय स्थानों के भी पुनरुपयोग को प्रोत्साहित करें।

बाहरी भ्रम को अक्षुण्ण बनाये रखते हुए और आंतरिक रूप को नये उद्भूत सामाजिक जरूरतों और समकालीन आकांक्षाओं के अनुरूप अनुकूलित करने को यह पारस्पारिक खेल ऐसा है को उस पर गंभीरता से विचार लिया जा सकता है। इस प्रक्रिया के जरिए ही इमारत के प्रतीकात्मक महत्व का आशय का क्षरण होगा और वास्तुशिल्प के साथ, समकालीन वास्तविकताओं और अनुभवों की गहनता बढ़ती जाएगी- जहां एक विशिष्ट नगरीय प्रारूप - विधा आम वास्तुशिल्पीय हस्तक्षेत्रों से रुपांतरित होगी और समकालीन जीवन और वास्तविकताओं की सेवा में प्रस्तुत होगा।

उसी प्रकार से, इस नगरीय भारत के बेहद जटिल वस्तु-तत्व का सामना करतेसमय सांस्कृतिक अर्थवत्ता की धारणाओं को, जो परियोजनाओं को सीमित कर वस्तु केंद्रित बना देती है, विस्तारित करना चाहिए। हमारे बेहद बहुलतावादी समाज की अनुकूल प्रतिक्रिया के लिए भी यह विस्तारण होना चाहिए क्योंकि ऐसे समाज में सांस्कृतिक स्मृति बहुधा एक अभिनीत-प्रदर्शित प्रक्रिया होती है। यह विशेष रुप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सचाई यह है कि हमारी नगरीय वास्तविकता का अधिकतर हिस्सा अब गतिमान शहर हैं। इस गत्यात्मक संदर्भ में संरक्षण -विवादों में अर्थवत्ता निमार्ण के बोध को सम्मिलित करना जरुरी होगा। असल में, उस अर्थवत्ता को विकसित करने की समझदारी सचमुच ही संरक्षणवादी की भूमिका को सही तौर पर परिवर्तन के पैरोकार-पैरवीकार के तौर पर प्रस्तुत करेगी। याने वह परिर्वन का विरोधी व्यक्ति नहीं वरन एक ऐसा माध्यम होगा जो समकालीन आकांक्षाओं की अभिव्यक्तित को सुगम बनाता है।

अनुवादक : राजम पिल्लै

■ ■ ■ ■ ■